P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4*(Part-2) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

नारीः संस्कृत महाकाव्य

सारांश

संस्कृत महाकाव्यों में प्रायः नारी स्थिति अच्छी ही थी। कहीं–कहीं किसी अवसर पर दोष भी पाये जाते हैं परन्तु साररूपेण देखे तो हम पाते है कि तत्कालीन महाकाव्यों में नारी स्थिति सम्मानजनक ही थी। वह शिक्षा ग्रहण करने की अधिकारी, स्वेच्छा से विवाह करने की अधिकारी, सम्पत्ति पर अधिकार, समाज व परिवार में प्रतिष्ठा पर आसीन थी। आज वर्तमान में हम कतिपय बिन्दुओं पर नारी की अवनति को प्रायः टेलीविजन, समाचारपत्रों में प्रतिदिन देखते व सुनते है जो अति दुर्भाग्यपूर्ण हैं क्योंकि जिस समाज में स्त्रियों की स्थिति अच्छी नहीं होती वह सभ्य उन्नत समाज के रूप में परिभाषित नहीं किया जाता।

पुष्पा
व्याख्याता,
संस्कृत विभाग,
गौरी देवी राज. महिला महाविद्यालय,
अलवर, राजस्थान, भारत

मुख्य शब्द : नारी शक्ति, शिक्षा, परिवर्तन।

प्रस्तावना

संस्कृत भाषा अधिकतर यूरोपीय भाषाओं की जननी है। संस्कृत भाषा में उपलब्ध महाकाव्य तत्कालीन नारी छवि को स्पष्टांकन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। भारतीय समाज में नारी एक विशिष्ट गौरवपूर्ण स्थान पर प्रतिष्ठित है। आर्य पुरूषों का यह कथन आज भी भारतीय नारी को गौरवान्वित कर रहा है।[1] ऋग्वेद में नारी शब्द प्रायः नहीं मिलता है परन्तु 'नृ' शब्द का प्रयोग वीरता का कार्य करना, दान देना, नेतृत्व करने के अर्थ में हुआ है और 'नर' शब्द का प्रयोग भी वीर, दाता, नेता अर्थ में हुआ है। स्त्री का नारी नाम भी इन्हीं विशेषताओं के कारण पड़ा होगा। वे युद्ध और शिकार में वीरों की सहायिका होती होगी और अतिथियों और भिक्षुकों के सत्कार–दान आदि का दायित्व स्त्री पर रहता होगा, उसकी इन्हीं विशेषताओं के कारण वह 'नारी' कहलाई गई होंगी। इसी प्रकार मेना 'मानयन्ति एनाः', अतः पुरूष इसका आदर करते है इसलिए इसे मेना भी कहा जाता था। नारी के अन्य पर्यायवाची भी उपलब्ध है योषा, स्त्री, वामा, अबला, सुन्दरी, प्रमदा, ललना, मानिनी और महिला इत्यादि।

प्रायः संस्कृत साहित्य में नारी पुरूष की सहधर्मचारिणी, नारी मातृदेवता स्वीकृत है और संस्कृत महाकाव्यों में प्रतिबिंबित नारी छवि प्रस्तुत शोध पत्र का विषय है। अतः संस्कृत के किन–किन महाकाव्यों को प्रस्तुत पत्र का आधार बनाया जायेगा, वह निम्न है :–

1.	रामायण	–	महर्षि वाल्मीकि
2.	महाभारत	–	महर्षि व्यास
3.	बुद्धचरित, सौन्दरानन्द	–	अश्वघोष
4.	रघुवंश, कुमारसम्भव	–	कालिदास
5.	किरातार्जुनीयम्	–	भारवि
6.	नैषधचरित	–	श्री हर्ष

संस्कृत भाषा में रचित सर्वप्रथम महाकाव्य 'रामायण' और इसके रचयिता वाल्मीकि 'आदि कवि' माने जाते हैं (संस्कृत साहित्य का इतिहास, पृ. 63)। रामायण के पश्चात् 'महाभारत' संस्कृत भाषा में निबद्ध महाकाव्य है। रामायण व महाभारत को आर्षकाव्य, उपजीव्य काव्य भी माना जाता है। प्रत्येक भारतीय के लिए आदर्श और निष्ठा का स्त्रोत 'रामायण' में सात काण्ड़ है – बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड, सुन्दरकाण्ड, युद्धकाण्ड तथा उत्तरकाण्ड। वाल्मीकिकृत रामायण में भगवान श्रीराम के जन्म से लेकर सरयू में जल समाधि लेने तक का विस्तृत वर्णन है। भारतीय गृहस्थ जीवन का विस्तृत चित्रण रामायण का मुख्य उद्देश्य प्रतीत होता है जिसमें आदर्श पिता, आदर्श माता, आदर्श भाई, आदर्श पति, आदर्श पत्नी, आदर्श सेवक इत्यादि के चरित को अनुपम रूप में प्रस्तुत किया है। इसमें स्थान–स्थान पर स्त्री की छवि के भी स्पष्ट चित्र मिलते हैं।

महर्षि व्यास की कृति महाभारत में 18 पर्व हैं। व्यास जी की कृति महाभारत कर्त्तव्यबोध की जानकारी देता है और महाभारत का अंश श्रीमदभगवदगीता सम्पूर्ण मानव जाति को मनुष्यता का पाठ पढ़ाकर सतमार्ग की ओर अग्रसर करने में उपयोगी है। रामायण और महाभारत के पश्चात् अश्वघोष रचित दो महाकाव्य बुद्धचरित और सौन्दरानंद है। बुद्धचरित महाकाव्य में कहीं स्त्री के पक्ष में कोई आलेख नहीं मिलता अपितु इसका चतुर्थ सर्ग तो स्त्री निंदा के लिए ही हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि बुद्ध को अपनी साधना में नारी बाधक प्रतीत हुई है। सौन्दरानंद 18 सर्गों का महाकाव्य है जिसमें बुद्ध के सौतेले भाई नंद और उसकी पत्नी सन्दरी की ही कथा प्रधान है। अन्त में नन्द अपने भाई बुद्ध से क्षमायाचनार्थ जाने से पूर्व अपनी पत्नी सुन्दरी से आज्ञा माँगता है। इससे पता चलता है कि पुरूष कहीं जाने से पूर्व पत्नी की आज्ञा लेते होंगे। अश्वघोष के दोनों महाकाव्यों में स्त्रियों के अधिकार व कर्त्तव्य पर अस्पष्ट उल्लेख मिलता है। संस्कृत साहित्य के आकाश पटल पर ध्रुव तारे की भाँति देदीप्यमान तारा 'महाकवि कालिदास' है, जिनके दो महाकाव्य रघुवंश और कुमारसम्भव दोनों ही प्रसिद्धि को प्राप्त हुए हैं। कन्या के रूप में माता–पिता के विशेष स्नेह का पात्र पार्वती का शास्त्र ज्ञान में पारंगत होना, विवाह संस्कार में सुहागिन स्त्रियों की सहभागिता, वधू के श्रृंगार में उनका योगदान, पार्वती की कठोर तपस्या इत्यादि का वर्णन कुमारसंभव में स्त्रियों की उपयोगिता की ओर इशारा करते हैं। रघुवंश में 19 सर्गों में रघुकुल के 29 राजाओं का वर्णन किया है, इन्दुमती स्वयंवर द्वारा यह ज्ञात होता है कि लड़कियों को वर चयन की स्वतंत्रता थी। दहेज प्रथा में बहुमूल्य वस्तुएँ देने का भी प्रचलन था। स्त्री पति का अनुगमन करती थी जैसे सीता राम के वन में जाने पर स्वेच्छा से उनका अनुगमन करती है। भारवि के किरातार्जुनीयम में स्त्री पात्र द्रौपदी राजनीति के दावपेंचों से अच्छी तरह परिचित थी, तत्कालीन समाज में नारी शिक्षा व कलाओं में भी निपुण होती थी। माघ के एकमात्र महाकाव्य शिशुपालवध में यद्यपि कोई स्त्री पात्र नहीं है परन्तु सेना के साथ आयी यादव रमणियों की कामजन्य भाव भगिमाएँ इन स्त्रियों का युद्ध स्थल तक आना यह बताता है कि ये स्त्रियाँ युद्ध में घायल हुए सैनिकों की सेवा सुश्रुषा के लिए साथ आती थी। महाकवि बिल्हण की ऐतिहासिक कृति विकमांकदेवचरितम्, श्रीहर्ष की कृति 'नैषधीयचरित' है। नैषधीयचरित में राजा भीम अपनी पुत्री दमयन्ती के लिए 'स्वयंवर' की रचना करते हैं, पुत्री के प्रति अगाधस्नेह, कन्या का शिक्षित होना, वर चयन में स्वतंत्रता, विवाह में कन्या को अमूल्य वस्तुओं को दिया जाना इत्यादि अनेक तथ्य उपलब्ध होते हैं।

उपरोक्त सभी महाकाव्य तथा अन्य महाकाव्यों के आलेख में तत्कालीन नारी छवि को निम्न बिन्दुओं के आधार पर अंकित किया जायेगा यथा –

नारी शिक्षा

जीवन के सर्वांगीण विकास का माध्यम निःसंदेह शिक्षा ही है। वैदिक काल में नारी शिक्षा प्रचलन में थी परन्तु जैसे–जैसे नारी के धार्मिक अधिकारों का ह्रास होने लगा परिणामस्वरूप नारी शिक्षा का भी ह्रास होने लगा। महाकाव्यकालीन कन्यायें विवाह के समय युवावस्था को प्राप्त थी और जीवन साथी चुनाव में स्वतंत्रता थी। अतः यह स्पष्ट है कि तत्कालीन युवती शिक्षित, समझदार, व्यवहारिक ज्ञान से परिपूर्ण होती थी इसीलिए उन्हें जीवन का अति महत्वपूर्ण निर्णय लेने में स्वतंत्रता थी और पिता द्वारा ही राजकुमार, स्वयंवर में आमंत्रित किये जाते थे (अज–इन्दुमति स्वयंवर रघुवंश, नल–दमयन्ती स्वयंवर नैषधीयचरित)। विद्या और कला की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती और पार्वती को विद्या की अधिष्ठात्री देवी पद पर प्रतिष्ठित करने की मानसिकता द्वारा इतना तो सिद्ध होता है कि स्त्रियों को विद्या प्राप्ति के मार्ग में धार्मिक दृष्टि से रूकावट नहीं हो सकती थी। स्त्रियों की व्यवहारिक शिक्षा के अन्तर्गत गृहविज्ञान का विशेष महत्व था और प्रत्येक स्त्री से गृहकार्य के सम्पूर्ण ज्ञान की अपेक्षा रखी जाती थी, चाहे वह कन्या राजपरिवार से सम्बन्धित हो या मध्यम वर्गीय परिवार से। समाज में फूलों की मालाएँ बनाना, प्रसाधन तैयार करना, केश सज्जा, अलंकरण, अनुलेपन आदि कार्यों में स्त्री दक्ष होती थी। धनी परिवारों में दासियाँ चौंसठ कलाओं में निपुण होती थी, परन्तु आपातकालीन परिस्थितियों में राजघरानों की स्त्रियाँ भी यह सब कार्य करती थी यथा – महाभारत के प्रसंगानुसार 'द्रौपदी का सरन्ध्री के रूप में उत्तरा की माता की केशसज्जा करना' इससे यह पता चलता है कि राजघरानों की कन्याएँ भी गृहकार्य व अन्य कलाओं में दक्ष होती थी। यदि स्त्री पाक कला में दक्ष नहीं है तो वह अतिथि सत्कार कैसे कर पायेगी क्योंकि महाकाव्य काल में अतिथि सेवा को विशेष महत्वपूर्ण बताया है। पार्वती भी कठोर तपस्या में संलग्न होने पर भी अतिथि सत्कार के दायित्व को भली–भाँति वहन करती है।[2]

संस्कृत महाकाव्यों में अधिकतर स्त्री–पुरूष राजघरानों से सम्बन्धित है, जिनके यहाँ गृहकार्य के लिए दास–दासियों की व्यवस्था होती थी। स्त्रियाँ ललित कला जैसे – नृत्य, संगीत, वाद्य, काव्य, चित्रकला इत्यादि में विशेष रूचि लेती थी, उच्च कुलों में इस शिक्षा पर अधिक ध्यान दिया जाता था जैसे – इतिहास प्रसिद्ध आम्रपाली (नृत्यांगना) को महात्मा बुद्ध उपदेश देते हैं।[3] समाज में नृत्यांगनाओं को विशेष स्थान प्राप्त या कन्याओं को नृत्य सीखने का पूर्ण अधिकार प्राप्त था। विष्णु पुराण में बाणासुर के मंत्री कूष्माण्ड की कन्या का वर्णन है, जिसकी सखी चित्रलेखा एक उच्च कोटि की चित्रकार थी और उसने अभिज्ञार्थ चित्रपट पर देव, दानव, गन्धर्व और मनुष्यों के चित्र बनाये थे। स्त्रियों की व्यवहारिक शिक्षा के साथ धार्मिक शिक्षा अवश्य दी जाती थी। कई स्थलों पर स्वयं स्त्रियाँ पति के बिना यज्ञ करती हुई दिखाई गई है। रामायण में राम के राज्याभिषेक के समय माता कौशल्या द्वारा अग्नि में आहूति डाले जाने और मन्त्रोच्चारण का वर्णन मिलता है।[4] इसी प्रकार जब बालि सुग्रीव के साथ युद्ध करने गया तो तारा ने मन्त्रोच्चारण द्वारा 'स्वास्त्यायन यज्ञ' किया था (स्वास्त्यायन यज्ञ – कल्याण और शुभ फल की अभिलाषा से किया जाता है) ऐसा यज्ञ कौशल्या द्वारा किये जाने का वर्णन मिलता है।[5] महाभारत के शान्तिपर्व में एक सुलभा नामक स्त्री की

दार्शनिक विद्वता का परिचायक है। उसने योग, समाधि, मोक्ष जैसे गूढ़ विषयों पर राजा जनक के साथ शास्त्रार्थ किया। इसी प्रकार भारविकृत किरातार्जुनीयम में नायिका द्रौपदी राजनीति व दर्शनिक तत्वों की कुशल ज्ञाता थी।[6] स्त्रियों का ईश्वर के प्रति विशेष स्नेह होता था यथा अजातशत्रु की पत्नीयों, नंद की माता और आम्रपाली द्वारा मोक्ष की दीक्षा ग्रहण करना। स्त्रियाँ सन्ध्यावंदन, यज्ञ, धार्मिक अनुष्ठान, व्रत, उपवास द्वारा धार्मिक नियमों पालन करती थी। कुमारसम्भव के पळचम सर्ग में पार्वती शिवजी को वर के रूप में पाने के लिए बहुत ही कठोर तपस्या करती है। इससे यह पता चलता है कि तत्कालीन समाज में स्त्रियाँ वाळिछत फल प्राप्ति की इच्छा से कठिन धार्मिक नियमों का पालन करती थी।[7] तत्कालीन समाज में दासियाँ चौसठ कलाओं में निपुण होती थी[8], इन्हें सभी व्यवहारिक नीतियों व राजनीति का ज्ञान होता था। इससे यह पता चलता है कि स्त्रियों को व्यवसायिक शिक्षा भी दी जाती थी। न केवल निम्न वर्ग की, उच्च वर्ग की स्त्रियाँ भी व्यवसायिक शिक्षा में निपुण होती थी परन्तु उच्च कुलों की स्त्रियाँ अपनी इन शिक्षाओं को आजीविका का साधन नहीं बनाती थी। महाकवि बिल्हण ने कश्मीर की स्त्रियों की प्रशंसा करते हुए कहा है कि वे संस्कृत और प्राकृत दोनों भाषाएँ बहुत ही अच्छे तरीके से बोलती थी, वे दोनों भाषाओं में वाक्पटु होती थी।[9] इसी प्रकार नैषधीयचरित में राजा नल का दमयन्ती के सौन्दर्य, विद्वता इत्यादि गुणों पर और किरातार्जुनीयम में द्रौपदी द्वारा कुशल मार्गदर्शक की भाँति पाण्डवों को उपदिष्ट करना, महाकाव्यकालीन स्त्रियों की वैदुष्य शक्ति को दर्शाता है। पार्वती की तपस्या पराकाष्ठा तक पहुँच जाती है और विद्वानों द्वारा उसकी विद्वता की स्वीकृति प्रदान की जाती है।[10]

विवाह

भारतीय संस्कृति में षोड्श संस्कारों के अन्तर्गत विवाह संस्कार अति महत्वपूर्ण संस्कार निर्दिष्ट हैं और मानव जीवन के चरम उद्देश्य 'मोक्ष' प्राप्ति हेतु 'ऋणत्रय' से मुक्ति आवश्यक है। विवाह संस्कार में वर–वधू दोनों ही महत्वपूर्ण है, स्त्री के अभाव में विवाह सम्पन्न नहीं हो सकता। महाकाव्यों में स्वयंवर की परम्परा प्रचलित थी। कन्या स्वयं वर का वरण करती थी तत्पश्चात् विधिवत विवाह करवाने की प्रथा थी, ऐसे दृष्टांत हमें स्थान–स्थान पर देखने को मिलते है, रघुवंश में भी राजा भोज ने अपनी बहन इंदुमती का विधिवत विवाह करवाया था।[11] इसी प्रकार राम–सीता विवाह भी शास्त्रविधि से सम्पन्न हुआ।[12] नैषधीयचरित में भी राजा नल का दमयंती के साथ विवाह विधिपूर्वक हुआ था। अतः यह स्पष्ट है कि महाकाव्यकाल में विवाह संस्कार का अति महत्वपूर्ण स्थान था और उस कन्या को अपने योग्य पति के चुनाव का पूर्ण अधिकार प्राप्त था। गृहस्थ जीवन की कल्पना नारी के बिना नहीं की जा सकती। महाकाव्यों में वर्णित परिवारों का स्वरूप पितृमूलक था, जहाँ पुरूष ही प्रधान था, कहीं पर स्त्री प्रधान समाज का उल्लेख नहीं मिलता है। पत्नी द्वारा पति, सास–ससुर व पारिवारिक सदस्यों की सेवा, सन्तति का पालन–पोषण आदि गृहस्थी चलाने के लिए अनिवार्य कार्यों को किया जाता था, उन कार्यों को करने की वह अधिकारी होती थी इसीलिए पत्नी को घर की ज्योति कहा जाता था।[13] महाभारत में पत्नी रहित घर को रसहीन तथा मरूस्थल सदृश बताया है[14], दाम्पत्य जीवन में सुख का आधार पत्नी को बताया है, जिस प्रकार वेदों में पत्नी को सच्चा मित्र बताया, उसी प्रकार महाकाव्यकाल में भी स्त्री को सम्मानजनक पद प्राप्त था, भले ही पुरूष प्रधान समाज हो। महाकाव्यकाल में स्त्रियाँ अपने बड़ों की सेवा करती हुई चित्रित हुई है। उनसे घर के बड़े, सास–श्वसुर की सेवा की अपेक्षा की जाती थी।[15] महाभारत में पति सेवा करने वाली स्त्री को स्वर्गगामी बताया है। पति की अनुपस्थिति में पत्नी सादगी से, अलंकरण रहित, सौन्दर्य प्रसाधन रहित जीवन व्यतीत करती थी जैसे राम से विमुक्त होने पर सीता का दृष्टांत चहुँ ओर प्रसिद्ध है। घर में सेवकों को प्रति दया भाव रखती थी, अतिथि सत्कार की परम्परा के निर्वहन में सिद्धहस्त थी। धार्मिक कृत्यों, यज्ञादि के सम्पादन में सम्मिलित होना स्त्री का प्रमुख अधिकार था, सीता की अनुपस्थिति में राम सोने की सीता की प्रतिमा द्वारा यज्ञ सम्पादन करते हैं, इसी से धार्मिक कृत्यों में स्त्री की उपयोगिता ज्ञात हाती है। वैदिक वाड्.मय में सती प्रथा का कोई निर्देश नहीं मिलता है। सती प्रथा से सम्बन्धित सामग्री महाकाव्यों में बहुत कम मिलती है। सती होने की पहली घटना महाभारत में आदि पर्व में पाण्डुमाद्री प्रसंग में उपलब्ध होती है[16], जिसमें सभी के मना करने पर भी माद्री पति के साथ सती होने के निश्चय पर अडिग रही और वसुदेव की चार पत्नीयाँ भी पति के साथ सती हुई थी।[17] सतीप्रथा केवल राजपरिवारों तक सीमित थी परन्तु सभी राजपरिवारों में ऐसा नहीं था। वास्तव में नारी को सती होने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाता था, अपितु ऋग्वेद में कालीदास के कुमारसंभव में कामदेव की पत्नी रति को सती होने से रोकते हैं परन्तु स्वर्ग प्राप्ति की लालसा में भी स्त्रियाँ सती होना चाहती थी। महाकाव्यों में चित्रित विदुषी स्त्रियाँ कुन्ती, द्रौपदी, कौशल्या आदि के सती होने के उल्लेख नहीं मिलते। तत्कालीन समाज में विधवा स्त्री की स्थिति अच्छी नहीं थी उन्हें मांगांलिक अवसरों से दूर रहना होता था जैसा की कुमारसंभव में बताया है कि पार्वती के शरीर का श्रृंगार कुल की सुहागिन स्त्रियों द्वारा किया जाने की प्रथा थी, परन्तु रामायण, महाभारत में विधवा स्त्री को अशुभ नहीं माना गया, वह भी मांगलिक कार्यों में सहयोगी होती थी। इसका संकेत कुन्ती द्वारा द्रौपदी को विवाह पश्चात् सर्वप्रथम आशीर्वाद देने में मिलता है। विधवा नारी आभूषण नहीं पहनती थी इस बात का पता इस दृष्टांत से चलता है जिसमें बताया है ''दुर्योधन विधवा नारी के समान अपने आभूषण उतार देता है, उसे पृथ्वी भोग की इच्छा नहीं रहती।'' विधवा के पुनर्विवाह को हेयदृष्टि से देखा जाता था। रामायण, महाभारत आदि महाकाव्यों के मुख्य स्त्री पात्र कौशल्यादि तीन रानियाँ, पाण्डु पत्नी कुंती ने आजीवन विधवा धर्म का पालन किया।

वैदिक वाड्.मय में उपलब्ध दृष्टांतों के आधार पर यह स्पष्ट है कि महिलाएँ पर्दा नहीं करती थी। विशेष अवसरों पर स्त्रियाँ घूँघट करती थी। शिशुपालवध में वर्णन है कि रानियाँ अन्तःपुर से बाहर जाने पर घूँघट

करती थी।[18] इसी प्रकार बुद्धचरित के तृतीय सर्ग संवेगउत्पत्ति में भी स्त्रियाँ राजकुमार को देखने के लिए पर्दा डालकर प्रतिस्पर्धा करती है कौन जल्दी पहुँचेगा।

नारी के गणिका, दासी आदि रूप आदर्श एवं अनुकरणीय नहीं माने गये, अपितु भारतीय समाज के प्रत्येक काल खण्ड में इनका अस्तित्व रहा है। गणिकाओं को समाज में हेयदृष्टि से नहीं देखा जाता था, अपितु समाज में स्वतंत्रतापूर्वक जीवन व्यतीत करती थी। चौसठ कलाओं में निपुण गणिका को नगर की समृद्धि, सौन्दर्य और गौरव का प्रतीक माना जाता था। शिुपालवध में ऐसी स्त्रियाँ सेना के साथ रहकर उन्हें युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित करती थी। किरातार्जुनीयम के सप्तम् सर्ग में इन्द्रनील पर्वत पर अर्जुन की तपस्या भंग करने के लिए अप्सराएँ नृत्य करती है। महाभारत में भी गणिकाओं का वर्णन आया है। गणिकाएँ कर्तव्यपरायणा होती थी, राजा भी उनके प्रति अपने सम्पूर्ण दायित्वों को पूरा करते थे। राजा गणिकाओं की शिक्षा के लिए शिक्षक नियुक्त करते थे और गणिकाओं के लिए एक सहस्रपण वेतन की व्यवस्था की जाती थी।[19] तत्कालीन समय में नारियों का एक अन्य वर्ग जो आत्मनिर्भर रहकर जीवन–यापन करता था, वह था दासी वर्ग, कन्याओं के विवाह में दहेज में दासियों को देने की भी प्रथा प्रचलित थी। इसका एक उदाहरण देवयानी के संदर्भ में मिलता है, वह अपने साथ सहस्र दासियाँ और शरमिष्ठा को लेकर गयी थी। रानी और राजकुमारियों की सखी के रूप में कुछ दासियाँ सम्मान भी पाती थी जैसे– हंसी–मजाक, क्रीड़ा–विहार, मंगलकार्य आदि ये दासियाँ सखी बनकर राजकन्याओं एवं रानियों का साथ देती थी। रघुवंश में इन्दुमती के साथ सुनंदा, नैषधचरित में दमयंती के साथ सरस्वती नामक दासी का स्वयंवर में साथ रहना इस ओर संकेत करता है।

दासियों की तरह, एक अन्य प्रकार की दासियाँ जो भगवान की सेवा अर्चना करने के लिए मन्दिरों में नियुक्त की जाती थी। देवताओं को प्रसन्न करने के लिए मन्दिरों में नर्तकियाँ होती है, उन्हें देवदासी कहा जाता था। यह देवदासियाँ अत्यन्त सुन्दर व नृत्यकला में निपुण होती थी। कुछ महाकाव्यों में देवदासियों का उल्लेख अवश्य मिलता है। बिल्हण कृत 'विक्रमांकदेवचरितम्' ऐतिहासिक महाकाव्य में विक्रमांकदेव के मंदिर के आँगन में नृत्य करने वाली स्त्रियाँ अत्यन्त सुन्दर होती थी।

संस्कृत महाकाव्यों में स्त्री को सम्पत्ति विषय अधिकार स्पष्ट उल्लेखित नहीं है, यद्यपि महाभारत में, गृहस्थ जीवन में पति–पत्नी दोनों को समतुल्य माना है परन्तु वहाँ पर भी स्त्री को सम्पत्ति विषयक अधिकार का प्रसंग नहीं आया लेकिन अन्य स्थान पर पत्नी को पति द्वारा तीन हजार रूपये देने की बात कही है।[20] महाकाव्यों द्वारा एक बात तो स्पष्ट है कि स्त्रियों के पास विविध आभूषण होते थे जिन्हें वे सामान्य दिनों में अन्य को उत्सवों आदि में इच्छानुसार धारण करती थी। आभूषण धारण करने में वह स्वतंत्र होती थी। महाकाव्यों में चित्रित नारी पात्र आभूषणों से अलंकृत होते हैं, निम्न और उच्च कुल दोनों में ही आभूषण स्त्रियों की पसंद के होते थे और पहने जाते थे।[21] विधवा स्त्रियों की सम्पत्ति विषयक अधिकारों का कहीं स्पष्ट संकेत नहीं मिलता परन्तु रामायण, महाभारत में चित्रित विधिवा स्त्री पात्र कौशल्या, कैकेयी, सुमित्रा, कुन्ती इत्यादि के पास भले ही सम्पत्ति होने की बात नहीं कही है परन्तु उनके पुत्र अपनी माताओं को अपना सर्वस्व मानते थे। अतः प्रत्यक्ष न भी हो अप्रत्यक्ष रूप से स्त्रियाँ गृहस्वामिनी होती थी।

अध्ययन का उद्देश्य

सृष्टि के प्रांरभ से ही नारी के अस्तित्व को सभी ग्रंथों में स्वीकार कर, उसे जीवन की 'धुरी' के रूप में स्वीकृत किया है। संस्कृत महाकाव्यों में नारी की क्या स्थिति थी, उसकी शिक्षा, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक स्थिति कैसी थी ? समाज में सम्मान प्राप्त था अथवा नहीं, कन्या जन्म पर शोक किया जाता था? कन्या भ्रूण हत्या, बाल–विवाह, यौनाचार, तलाक, बहु–विवाह, दहेज–प्रथा इत्यादि कुप्रथाओं के दंश से वह क्या उस समय भी आहत थी अथवा नहीं, तत्कालीन साहित्य के माध्यम से नारी दशा को बनाने हेतु प्रस्तुत शोध पत्र लेखन कार्य किया है, साथ ही तब से अब तक क्या सुपरिवर्तन और दुष्परिवर्तन आये है इस पर प्रकाश डालना भी प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य है।

निष्कर्ष

समग्र दृष्टि की आधार स्वरूप स्त्री भूलोक के अस्तित्व का मूल है। स्त्री से सन्तति, सन्तति से समाज और समाज से संसार का निर्माण हुआ है। परिवर्तनशील संसार में स्त्री की स्थिति और सम्मान में परिवर्तन आया, जहाँ वैदिककाल में स्त्री की स्थिति अत्यनत सम्मानजनक थी वही बाद के कालखण्डों में परिवर्तन आया उसकी स्थिति उतनी अच्छी नहीं रही। महाकाव्यकाल में स्त्रियाँ घट व समाज में प्रतिष्ठित पद पर आसीन थी जहाँ समाज में कुलीन स्त्रियाँ थी, वहीं दूसरी ओर गणिकाओं को भी बुरी दृष्टि से नहीं देखा जाता था। संस्कृत महाकाव्यों में मुख्यतः राजपरिवारों की स्त्रियों का ही वर्णन मिलता है। राजपरिवारों में स्त्रियों की छवि बहुत ही अच्छी व प्रशंसनीय थी। एक ओर जहाँ उन्हें घर की ज्योति, सुखों का आधार बताया है तो दूसरी ओर सती सावित्री सीता का लोकलाज के भय से त्याग भी किया है। इन सब द्वन्दों और उतार–चढ़ाव के बाद भी महाकाव्यों में स्त्रियों की छवि बहुत आदर्शमयी व उज्जवल है। द्रौपदी ने चीरहरण के अपमान को भुलाया नहीं अपितु क्रोध को मन में रखा, अवसर मिलने पर उद्गार प्रकट किये, सीता ने भी रावणहरण करने पर भी अपने चरित्र को पाक रखा इन्दुमती ने नन्दनी की सेवा में सुखों को त्याग दिया, सीता ने भी राम के वनवास लेने पर साथ चलने जैसा कठोर निर्णय लिया, पार्वती ने पळचाग्नि मध्य कठोर तपस्या की क्योंकि यह सभी स्त्री अलौकिक विशेषताओं वाली धीर, सहन शक्ति सम्पन्न, त्याग, समर्पण, ममता, दृढ़ निश्चय वाली, उत्कृष्ट छवि वाली नारियाँ थी जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड पर केवल भारत में ही अवतरित हुई है।

महाकाव्यकाल में स्त्रियाँ बेदाग छवि वाली चित्रित है। महाभारत काल में माता को श्रेष्ठ गुरू बताया है। महाकाव्य काल में पुरूष संतान अथवा पुत्री संतान के मध्य भेदभाव दृष्टिगोचर नहीं होता अपितु दोनों के

कार्यक्षेत्र व कार्यों की प्रकृति अलग–अलग निर्धारित की थी, जरूरत पड़ने पर स्त्री युद्ध क्षेत्र में युद्ध भी कर सकती थी। महाकाव्यकालीन नारी आध्यात्मिक, व्यवहारिक, राजनैतिक, धार्मिक, व्यवसायिक शिक्षा ग्रहण करने की अधिकारी थी। नारी शिक्षित होगी तो परिवार, समाज व देश की उन्नति शीघ्र होगी। अतः संक्षेप में कहाँ जा सकता है स्त्रियों को तत्कालीन महाकाव्यों में उन्नति के पथ पर अग्रसर होते हुए दर्शाया है। स्त्रियों का घर व समाज में महत्वपूर्ण पद था, उन्हें परिवार व समाज का अभिन्न अंग माना जाता था, स्त्रियों के अभाव में परिवार अधूरे होते थे। नारी को कन्या रूप में, पत्नी रूप में, माँ के रूप में, भाभी के रूप में, सास के रूप में अलग–अलग प्रकार के अधिकार व कर्तव्यों से युक्त किया गया, जिसका निर्वहन एक स्त्री ने भली–भाँति किया और आज भी कुछ परिवर्तनों के साथ नारी का स्थान, घर, समाज व देश में सम्मानजनक है। आज भी लगातार स्त्री संघर्ष करती हुई अपनी निष्कंलक छवि को बरकरार रखती हुई अनवरत आगे बढ़ने के लिए प्रयत्नशील है और रहेगी।

अंत टिप्पणी

1. *यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।*
   यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफला क्रियाः।।
   (मनुस्मृति 3/56)
   (हिन्दी टीका पं. हरगोविन्द शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरिज, वाराणसी, 2021 विक्रमी)
2. *तमातिथेयी बहुमानपूर्वया सपर्यया प्रत्युदियाय पार्वती।*
   भवन्ति साम्येऽपि निविष्टचेतसां वपुर्विशेषेष्वतिगौरवाः क्रियाः।।
   (कुमारसम्भव 05/3)
   (कुमारसम्भवम्, कालिदास, साहित्य भंडार, मेरठ, 1971)
3. *बीजं विनिषिप्य यथा सुकाले, क्षेत्रे कृति तुष्यति भूमिधारी।*
   तथा आम्रपाली विधिनोपदिश्य तुतोष तस्यां स च कालवेता।।
   (बुद्धचरित 22/55)
   (बुद्धचरितं, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, वाराणसी, पटना, 2031 विक्रमी)
4. *सा क्षोमवसना झष्टा नित्यं व्रतपरायणा।*
   अग्निं जुहोति स्म तदा मन्त्रवत्कृतमबला।।
   (रामायण 2.20.15)
   (रामायणम्, पंड़ित पुस्तकालय, काशी प्रथमवृति, 1951)
5. *ततः स्वस्त्ययनं कृत्वा मन्त्रवद्विजयोषिणी*
   अन्तःपुरं सह स्त्रीभिः प्रविष्टा शोकमोहिता। (रामायण 4/16/12)
   अतीव चाश्रुप्रतिपूर्णलोचना समाप्य च स्वस्त्ययनं यथाविधि।
   प्रदक्षिणं चापि चकार राघवं पुनः पुनश्चपि निरीक्ष्ये सस्वजे।।
   (रामायण 2/25/40)
   (वाल्मीकी रामायणम् गुजराती प्रिटिंग प्रेस)
6. *इमामहं वेद न तावकीं धियं विचित्ररूपाः खलु चितवृत्तयः।*
   विचिन्त्या भवदापदं परां रूजन्ति चेतः प्रसभं ममाधयः।।
   (किरातार्जुनीयम 01/37)
   (किरातार्जुनीयम, भारवि, गुर्जर रत्न कल्याण, 1951)
7. *इयं महेन्द्र प्रभृतिनधि श्रियश्चतुर्दिगीशानवमत्य मानिनी।*
   अरूपहार्यं मदनस्य निग्रहात् पिनाकपाणिं पतिमाप्तुमिच्छति।।
   (कुमारसम्भव 05/53)
   (कालिदास, हिन्दी व्याख्याकार पंड़ित गंगाधर शास्त्री भारद्वाज, चौखम्भा संस्कृत सीरिज, वाराणसी, 1963)
8. *अभ्यासप्रयोज्याश्चं चतुष्टिकान् योगान् कन्यारहस्येकामिन्यम्यसत्।*
   (का.सू. 1/3)
   (वात्स्यायन मुनि हिन्दी व्याख्याकार, देवदत्त शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरिज, वाराणसी, 1964)
9. *यत्र स्त्रीवामपि मिपरं जन्मभाषावदेव।*
   प्रत्यावासं विलसति वचः संस्कृतं प्राकृतं च।।
   (विक्रमांकदेवचरितम् 18/06)
   (महाकवि बिल्हण, अनुवादक पं. विश्वनाथ शास्त्री भारद्वाज, हिन्दू विश्वविद्यालय साहित्य अनुसंधान समिति, बनारस, 1958, 1962, 1964)
10. *धर्मवृद्धेषु वय न समीक्ष्यते।*
    (कुमारसम्भव 05/12)
    (कालिदास, हिन्दी व्याख्याकार पंड़ित गंगाधर शास्त्री भारद्वाज, चौखम्भा संस्कृत सीरिज, वाराणसी, 1963)
11. *तत्रार्चितो भोजपतेः पुरोधा हुत्वाग्निमाज्यादिभिरग्निकल्पः।*
    तमेव चाधाय विवाहसाक्ष्ये वधूवरौ संगमयाचकार।।
    (रघुवंश 7/20)
    (रघुवंश, व्याख्याकार– श्रीकृष्णमणि त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी–221001, संस्करण – 2004)
12. *तौ समेत्य समये स्थितावबुभौ भूपती वरूणवासवोपमौ।*
    कन्यकातनयकौतुकाक्रियां स्वप्रभावसदृशी वितेन्तु।।
    (रघुवंश 11/53)
    (रघुवंश, व्याख्याकार– श्रीकृष्णमणि त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी–221001, संस्करण – 2004)
13. *पूजनीया महाभागाः पुण्याश्च गृहदीप्तयः*
    (महाभारत 5.38.11)
    (महाभारत, वेदव्यास, अनुवादक पं. रामनारायण दत्त शास्त्री पाण्डे, गोविन्द भवन कार्यालय, गीता प्रेस, गोरखपुर)
14. *पुत्रपौत्रवधूभृत्यैराकीर्णमपि सर्वतः।*
    भार्याहीनगृहस्थास्य शून्यमेवं गृहं भवेत।।
    (महाभारत 12.4.4)
    (महाभारत, वेदव्यास, अनुवादक पं. रामनारायण दत्त शास्त्री पाण्डे, गोविन्द भवन कार्यालय, गीता प्रेस, गोरखपुर)
15. *वन्दितव्यो दशरथः पिता मम जनेश्वरः।*
    माता च मय कौशल्या वृद्धासन्तापकर्शिता।।

(रामायण 2.26.30,31)
(रामायणम्, पंड़ित पुस्तकालय, काशी प्रथमवृति, 1951)

16. *तत्रेन चिताग्निस्यं माद्री समन्वारूरोह।*
(महा. 1/95/65)
राज्ञः शरीरेण सह ममापीदं कलेवरम्।
दग्धव्यं सुप्रतिच्छन्नमेतदार्ये प्रियं कुरू।।
(महाभारत 1.125.29)
(महाभारत, वेदव्यास, अनुवादक पं. रामनारायण दत्त शास्त्री पाण्डे, गोविन्द भवन कार्यालय, गीता प्रेस, गोरखपुर)

17. *तं देवकी च भद्रा च रोहिणी मदिरा तथा।*
अन्वारोहन्त च तदा भर्तारं योषितां वराः।।
तं चिताग्निगतं वीरं शूरपुत्रं वीराबना।
ततोऽन्वारूरूहुः पत्न्यश्चतस्रः पतिलोकगा।।
(महाभारत 16.7.18.24)
(महाभारत, वेदव्यास, अनुवादक पं. रामनारायण दत्त शास्त्री पाण्डे, गोविन्द भवन कार्यालय, गीता प्रेस, गोरखपुर)

18. *यानाज्जनः परिजनैश्वतार्यमाणा राज्ञीर्नरापनयमाकुलसौविदल्लाः स्रस्तावगुण्ठनपटाः क्षणठलक्ष्यमाणवक्तश्रियः सभयकौतुकमीक्षते स्म।।*
(शिशुपालवध 5/17)
(माघ, अनुवादक श्री रामप्रताप त्रिपाठी, शास्त्री, रामप्रताप त्रिपाठी सम्मेलन मुद्रणालय, प्रयाग, 2009 विक्रमी)

19. *सौभाग्यालंकारवृद्धया सहस्रेण वारं कनिष्ठं मध्यममुत्तमं वारोपयेत्।*
(कौटिल्य अर्थशास्त्र 2.27.2)
(कौटिल्य अर्थशास्त्र, वाचस्पति गैरोला, मोतीलाल बनारसी दास, वाराणसी)

20. *त्रिसहस्रपरो दायः स्त्रियै देयो धनस्य वै।*
भर्ता तच्च धनं दतं यथार्ह भोक्तुमर्हति।।
(महाभारत 13.47.23)
(महाभारत, वेदव्यास, अनुवादक पं. रामनारायण दत्त शास्त्री पाण्डे, गोविन्द भवन कार्यालय, गीता प्रेस, गोरखपुर)

21. *निशासु भास्वत्कलनूपुराणां यः सळचरोऽभूदभिसारिकाणाम्।*
नदन्मुखोल्काविचितामिषाभि स वाह्यतेरापथः शिवाभिः।।
(रघुवंश 16/12)
(रघुवंश, व्याख्याकार– श्रीकृष्णमणि त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी–221001, संस्करण – 2004)